

कई मोर्चों पर लड़ता है एक फौजी का परिवार



वंदना
यादव
लेखक

फौजी और बॉर्डर के बारे में सब जानते हैं, मगर मुट्ठीभर लोग ही जानते होंगे कि देश के लिए जो जवान बॉर्डर पर लड़ रहा होता है, उसकी गैर मौजूदगी में उसकी पत्नी, बच्चे और मां-बाप किस हाल में रह रहे होते हैं। लेखक वंदना यादव ने अपने उपन्यास 'कितने मोर्चे' में एक फौजी के परिवार के इन्हीं सुख-दुख को बयां किया है। बताती हैं- 'इस उपन्यास के हर चैप्टर में मैंने अलग-अलग मोर्चों का जिक्र किया है। पहला चैप्टर वीरनारी यानी शहीद की पत्नी पर है और आखिरी एक शहादत पर। वंदना यादव के पति एक आर्मी ऑफिसर हैं। उन्होंने लगातार तीन फील्ड पोस्टिंग एक साथ की हैं। आमतौर पर फील्ड पोस्टिंग के दौरान एक फौजी ढाई साल बॉर्डर पर रहता है। उनकी हर दूसरी या तीसरी पोस्टिंग फिर से बॉर्डर पर आ जाती है।

मेरे पति की लगातार तीन फील्ड पोस्टिंग रही। ऐसे में मैं लगभग सात साल तक अकेली रही। मेरी बड़ी बेटी नौवी में थी, तब मेरे पति गए थे और जब वे वापस आए तो वह पढ़ने के लिए विदेश जा चुकी थी। ऐसे में उसके पिता के साथ उसका परिचय बस एक मेहमान की तरह हुआ। एक चैप्टर में मैंने इसका जिक्र किया है जब पति को छुट्टी नहीं मिल रही है और बच्चों की परीक्षा के दिनों में पत्नी अकेले घर शिफ्ट कर रही है। उसके बाद नई जगह शिफ्ट होने पर उसे किन चीजों का सामना करना पड़ रहा है। मैं अपने पति के बिना दोनों बेटियों को पाल रही थी। स्कूल और बीमार होने पर अस्पताल लेकर जाती थी। हर मोर्चे पर अकेले जिम्मेदारी उठा रही थी। पति के साथ मैं यह सब परेशानियां इसलिए शेयर नहीं कर रही थी क्योंकि मुझे मालूम था कि उन्हें छुट्टी नहीं मिलेगी मगर यह सब सुनकर भी वह परेशान जरूर हो जाएंगे। एक चैप्टर में बताया है कि बच्चे सोचते हैं कि जब मुझे पापा की जरूरत थी तो वे मेरे साथ नहीं थे सिर्फ मां थी।

वह बच्चों और पति के बीच सैंडविच बन जाती है। बॉर्डर पर तैनात फौजियों के परिवारों के लिए सेना द्वारा रहने की व्यवस्था की जाती है। इन्हें एस.एफ. क्वार्टर यानी सेपरेटेड फैमिली क्वार्टर कहते हैं। एक चैप्टर

में मैंने एक महिला का जिक्र किया है, जो हमारे साथ रह रही थीं। उनके पति शहीद हुए और उन्हें घर खाली करना पड़ा। कम ही लोग जानते होंगे कि आर्मी अफसरों को बड़े-बड़े घर तो दिए जाते हैं। मगर जैसे ही पति बॉर्डर पर जाता है तो उसके परिवार को छोटे से फ्लैट में शिफ्ट कर दिया जाता है। तर्क होता है कि परिवार में सदस्य कम हो गए हैं। मैंने ऐसे ही एक इलाके का काल्पनिक नाम अर्जुन विहार रखा है। जहां रह रहे फौजियों के परिवारों के संघर्ष बताए हैं। यहां 340 घर थे। सबकी खुशियां और गम एक से हैं। वहां सभी एक ही हालात में रहते हैं, तो एक-दूसरे से हिम्मत भी लेते हैं। बिना पिताओं के उनके जो बच्चे बड़े हो रहे होते हैं वे अक्सर पूछते हैं क्या हमारे पिता हमारे लिए नहीं हैं? हालांकि ऐसा नहीं है कि मैंने उपन्यास में सिर्फ इन तकलीफों का ही जिक्र किया हो, वहां रहने के अपने मजे भी हैं। फौजियों और आम नागरिकों की जिंदगी बहुत जुदा होती है।

हमारे बाजार, कैंटीन, स्कूल, अस्पताल सब कुछ अलग हैं। उपन्यास लिखने में साढ़े तीन साल लगे। एक फौजी सोचता है कि मैं अपने परिवार के लिए बॉर्डर पर बैठा हूं। वहीं पत्नी सोचती है कि जब पति आता है तो फौजी वाला बिहेवियर क्यों लेकर आता है। वह यहां चाहतों से भरा पति क्यों नहीं होता। लेकिन फौजी तो फौजी होता है। वह बच्चों से भी वैसे ही डिसिप्लिन की उम्मीद करता है। भूल जाता है कि उसके बच्चे सिविलियन हैं। इस तरह बहुत सी टकराहटें भी होती हैं। हालांकि यह पर्सन टू पर्सन डिपेंड करता है। मुझे इस बात का दुख है कि फौजी की पत्नी को पता होता है कि पति की मौत के बाद उसे गणतंत्र दिवस पर सम्मानित कर उसके बाद लगभग उसे भुला दिया जाता है। उसके बाद उसके परिवार को कोई पूछने वाला नहीं होता। देश सिर्फ एक दिन देश के शहीदों को याद करता है। उसके बाद किसी को नहीं मालूम होता कि उसका परिवार कैसे रह रहा है। क्या यह देश उनके लिए जवाबदेह है? उनकी शहादत देश के लिए गौरव का विषय हो सकती है, लेकिन उसके परिवार के लिए यह सिर्फ इतना ही नहीं है।

बातचीत- बुशरा खान नूरी